Airo International Research Journal
Volume XIII, ISSN: 2320-3714
November, 2017

ज्ञान-विज्ञान विमुक्तये
UGC Approval Number 63012

सूरदास: भूमिके संस्कृत ग्रंथे:

Gunjan Yadav M.phil student MDU Rohtak
Dr. Asha Professor MDU Rohtak

सार:

संस्कृतम् जगतः अतिप्राचीना समृद्धा शास्त्रीया च भाषा वर्तते। संस्कृतम् भारतस्य जगत: च भाषासु प्राचीनतमा। संस्कृता वाक् , भारती, सुरभारती, अमरभारती, अमरवाणी, सुरवाणी, गीर्वाणवाणी, गीर्वाणी, देववाणी, देवभाषा, दैवीवाक् इत्यादिभिः नामभिः एतद्भाषा प्रसिद्धा।

भारतीयभाषासु बाहुल्येन संस्कृतशब्दाः उपयुक्ताः। संस्कृतात् एव अधिका भारतीयभाषा उद्भूताः। तावदेव भारत-युरोपीय-भाषावर्गीयाः अनेकाः भाषाः संस्कृतप्रभावं संस्कृतशब्दप्राचुर्यं च प्रदर्शयन्ति।

व्याकरणेन सुसंस्कृता भाषा जनानां संस्कारप्रदायिनी भवति। अष्टाअध्यायीति नाम्नि महर्षिपाणिनेः विरचना जगतः सर्वासां भाषाणाम् व्याकरणग्रन्थेषु अन्यतमा, वैयाकरणानां भाषाविदां भाषाविज्ञानिनां च प्रेरणास्थायनं इवास्ति।

भूमिका:

संस्कृतवाङ्मयं विश्ववाङ्मये स्वस्य अद्वितीयं स्थानम् अलङ्करोति। संस्कृततस्य् प्राचीनतमग्रन्थाः वेदाः सन्ति । वेद-शास्त्र-पुराण-इतिहास-काव्य-नाटक-दर्शनादिभिः अनन्तवाङ्मयरूपेण विलसन्ती अस्ति एषा देववाक्। न केवलं धर्म-अर्थ-काम-मोक्षात्मकाः चतुर्विधपुरुषार्थहेतुभूताः विषयाः अस्याः साहित्यस्य शोभां वर्धयन्ति अपितु धार्मिक-नैतिक-आध्यात्मिक-लौकिक-पारलौकिकविषयैः अपि सुसम्पन्ना इयं दववाणी।

सम्यक् परिष्कृतं शुद्धमर्थाद् दोषरहितं व्याकरणेन संस्कारितं वा यत्तदेव संस्कृतम्। एवञ्च सम्-उपसर्गपूर्वकात् कृधातोर्निष्पन्नो ऽयं शब्द संस्कृतभाषेति

नाम्ना सम्बोध्यते। सैव देवभाषा गीर्वाणवाणी , देववाणी, अमरवाणी, गीर्वागित्यादिभिर्नामभिः कथ्यते। इयमेव भाषा सर्वासां भारतीयभाषाणां जननी, भारतीयसंस्कृतेः प्राणस्वरूपा , भारतीयधर्मदर्शनादिकानां प्रसारिका , सर्वास्वपि विश्वभाषासु प्राचीनतमा सर्वमान्या च मन्यते। अस्माकं समस्तमपि प्राचीनं साहित्यं संस्कृतभाषायामेव रचितमस्ति, समस्तमपि वैदिक साहित्यं रामायणं महाभारतं पुराणानि दर्शनग्रन्थाः स्मृतिग्रन्थाः काव्यानि नाटकानि गद्य-नीति-आख्यानग्रन्थाश्च अस्यामेव भाषायां लिखिताः प्राप्यन्ते। गणितं, ज्योतिषं, काव्यशास्त्रमायुर्वेदः, अर्थशास्त्रं राजनीतिशास्त्रं छन्दःशास्त्रं ज्ञान-विज्ञानं तत्वजातमस्यामेव संस्कृतभाषायां समुपलभ्यते। अनेन संस्कृतभाषायाः विपुलं गौरवं स्वमेव सिध्यति।

मेरो मन अनत कहाँ सुख पावै।

जैसे उड़ि जहाज की पंछी , फिरि जहाज पै आवै॥

कमल-नैन को छाँड़ि महातम , और देव को ध्यावै।

परम गंग को छाँड़ि पियासो , दुरमति कूप खनावै॥

जिहिं मधुकर अंबुज-रस चाख्यो , क्यों करील-फल भावै।

'सूरदास' प्रभु कामधेनु तजि, छेरी कौन दुहावै॥

हरि कौं टेरति है नँदरानी ।

बहुत अबार भई कहँ खेलत , रहे मेरे सारँग-पानी ?

सुनतहिं टेर , दौरि तहँ तहँ आए ,कब के निकसे लाल ।

जेंवत नहीं नंद तुम्हरे बिनु , बेगि चलौ , गोपाल ॥

स्यामहि ल्याई महरि जसोदा , तुरतहिं पाइँ पखारे ।

सूरदास प्रभु संग नंद कैं बैठे हैं दोउ बारे ॥

बोलि लेहु हलधर भैया कौं ।

मेरे आगैं खेल करौ कछु , सुख दीजै मैया कौ ॥

मैं मूँदौ हरि! आँखि तुम्हारी , बालक रहैं लुकाई ।

हरषि स्याम सब सखा बुलाए खेलन आँखि-मुँदाई ॥

हलधर कह्यौ आँखि को मूँदै , हरि कह्यौ मातु जसोदा ।

सूर स्याम लए जननि खिलावति, हरष सहित मन मोदा ॥

माखन बाल गोपालहि भावै ।

भूखे छिन न रहत मन मोहन , ताहि बदौं जो गहरु लगावै ॥

आनि मथानी दह्यौ बिलोवौं , जो लगि लालन उठन न पावै ।

जागत ही उठि रारि करत है , नहिं मानै जौ इंद्र मनावै ॥

हौं यह जानति बानि स्याम की , अँखियाँ मीचे बदन चलावै ।

नंद-सुवन की लगौं बलैया, यह जूठनि कछु सूरज पावै ॥

जेंवत कान्ह नंद इकठौरे ।

कछुक खात लपटात दोउ कर , बालकेलि अति भोरे ॥

Airo International Research Journal
Volume XIII, ISSN: 2320-3714
November, 2017

ज्ञान-विज्ञान विमुक्तये
UGC Approval Number 63012

बरा-कौर मेलत मुख भीतर , मिरिच दसन टकटौरे ।

तीछन लगी नैन भरि आए , रोवत बाहर दौरे ॥

फूँकति बदन रोहिनी ठाढ़ी , लिए लगाइ अँकोरे।

सूर स्याम कौं मधुर कौर दै कीन्हें तात निहोरे ॥

नंद बुलावत हैं गोपाल ।

आवहु बेगि बलैया लेउँ हौं , सुंदर नैन बिसाल ॥

परस्यौ थार धर्‌यौ मग जोवत , बोलति बचन रसाल ।

भात सिरात तात दुख पावत , बेगि चलौ मेरे लाल ॥

हौं वारी नान्हें पाइनि की , दौरि दिखावहु चाल ।

छाँड़ि देहु तुम लाल अटपटि , यह गति मंद मराल ॥

सो राजा जो अगमन पहुँचै , सूर सु भवन उताल ।

जो जैहैं बल देव पहिले हीं, तौ हँसहैं सब ग्वाल ॥

Airo International Research Journal
Volume XIII, ISSN: 2320-3714
November, 2017

ज्ञान-विज्ञान विमुक्तये
UGC Approval Number 63012

सूरदास: भूमिके संस्कृत ग्रंथे:

पौढ़िऐ मैं रचि सेज बिछाई ।

अति उज्ज्वल है सेज तुम्हारी , सोवत मैं सुखदाई ॥

खेलत तुम निसि अधिक गई , सुत, नैननि नींद झँपाई ।

बदन जँभात अंग ऐंडावत , जननि पलोटति पाई ॥

मधुरैं सुर गावत केदारौ , सुनत स्याम चित लाई ।

सूरदास प्रभु नंद-सुवन कौं नींद गई तब आई ॥

कोण गती ब्रिजनाथ । अब मोरी कोण गती ब्रिजनाथ ॥ध्रु०॥

भजनबिमुख अरु स्मरत नही । फिरत विषया साथ ॥१॥

हूं पतीत अपराधी पूरन । आचरु कर्म विकार ॥२॥

काम क्रोध अरु लाभ । चित्रवत नाथ तुमही ॥३॥

विकार अब चरण सरण लपटाणो । राखीलो महाराज ॥४॥

सूरदास प्रभु पतीतपावन । सरनको ब्रीद संभार ॥५॥

खेलत मैं को काको गुसैयाँ ।

हरि हारे जीते श्रीदामा , बरबसहीं कत करत रिसैयाँ ॥

जात-पाँति हम ते बड़ नाहीं , नाहीं बसत तुम्हारी छैयाँ ।

अति धिकार जनावत यातैं , जातैं अधिक तुम्हारैं गैयाँ !

रुहठि करै तासौं को खेलै , रहे बैठि जहँ-तहँ सब ग्वैयाँ ॥

सूरदास प्रभु खेल्यौइ चाहत, दाउँ दियौ करि नंद-दहैयाँ ॥

आँगन मैं हरि सोइ गए री ।

दोउ जननी मिलि कै हरुऐं करि सेज सहित तब भवन लए री ॥

नैकु नहीं घर मैं बैठत हैं , खेलहि के अब रंग रए री ।

इहिं बिधि स्याम कबहुँ नहिं सोए बहुत नींद के बसहिं भए री ॥

कहति रोहिनी सोवन देहु न , खेलत दौरत हारि गए री ।

सूरदास प्रभु कौ मुख निरखत हरखत जिय नित नेह नए री ॥

भ्रज घर-घर प्रगटी यह बात ।

दधि-माखन चोरी करि लै हरि , ग्वाल -सखा सँग खात ॥

ब्रज-बनिता यह सुनि मन हरषित , सदन हमारैं आवैं ।

माखन खात अचानक पावैं , भुज हरि उरहिं छुवावैं ॥

मन-हीं-मन अभिलाष करति सब हृदय धरति यह ध्यान ।

सूरदास प्रभु कौं घर तैं लैं दैहौं माखन खान ॥

बाँधौं आजु , कौन तोहि छोरै ।

बहुत लँगरई कीन्हीं मोसौं , भुज गहि ऊखल सौं जोरै ॥

जननी अति रिस जानि बँधायौ , निरखि बदन , लोचन जल ढोरै ।

यह सुनि ब्रज-जुवती सब धाई , कहतिं कान्ह अब क्यौं नहिं छोरै ॥

ऊखल सौं गहि बाँधि जसोदा , मारन कौं साँटी कर तोरै ।

साँटी देखि ग्वालि पछितानी , बिकल भई जहँ-तहँ मुख मोरे ॥

सुनहु महरि! ऐसी न बूझिए , सुत बाँधति माखन-दधि थोरैं ।

सूर स्याम कौं बहुत सतायौ, चूक परी हम तैं यह भोरैं ॥

सन्दर्भ:

- सूरदास: संस्कृत: महत्व:
- सूरदास: ग्रंथे